।। सुयं मे आउसं ।।

श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन का संवाद-सेतु

श्रुतदीप

विक्रम संवत २०७९ • वर्ष : ६ • अंक : ३ • फरवरी २०२३

प्राचीन भारतीय विद्यापीठ- अमूल्य ज्ञान के भंडार

- प्रशांत पोळ

ईस्वी सन की दसवीं शताब्दि में भारत विश्व की आर्थिक शक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण केंद्र था। संपूर्ण विश्व के व्यापार में २९ प्रतिशत भागीदारी भारत की थी। वर्तमान में वैश्विक स्तर पर चीन १४.४ प्रतिशत की हिस्सेदारी के साथ सबसे पहले क्रमांक पर है, मगर कुल व्यापार में भारत का प्राचीन रेकार्ड तोडने में चीन अभी भी भारत से पीछे है। यह मत प्रसिद्ध अर्थशास्त्र प्रोफेसर **अंगस मेडिसन** का है। 'बेरोनाइक' योजना के स्तर पर भारत का व्यापारिक दर्जा उपर रहने के और भी कई प्रमाण उपलब्ध हैं। इसके पीछे कई बडे कारणों के साथ भारत की निर्यातक्षमता भी काफी प्रचंड थी। केवल भारत से मंगवाई वस्तुओं के आयात से मिलने वाले कमिशन से ही यूरोप के अनेक शहर समृद्ध हो गये थे। यह मत स्वयं यूरोपीयन इतिहासकारों का है। इससे प्रमाणित होता है कि उस काल में भारत समक्ष मानवीय श्रम, तंत्रज्ञ और कुशल कारीगरों, व्यापारियों, संशोधक की भरमार थी। इन्हीं कारणों से भारत आर्थिक रूप से काफी मजबूत था। प्रश्न यह है कि सभी क्षेत्रों में इतनी प्रगति के साथ भारत में निपुण और ज्ञान समृद्ध लोगों को तालिम देने वाली शक्तियां कौन सी थी? उनके प्रशिक्षण व्यवस्था को संचालित करने कैसी संस्थागत व्यवस्थाएं थी? ये प्रश्न जितने बडे है उतने ही आश्चर्यकारक भी हैं।

अंग्रेज इतिहासकारों ने ऐसा आभास फैला रखा था कि- भारत की शिक्षा व्यवस्थाओं की नींव उन्होंने ही रखी है। और दूसरा भ्रम उन्होंने यह फैलाया कि- अंग्रेजों के आने से पूर्व भारत में संस्कृत आदि भाषाएं पौरोहित्य आदि कर्मकांड तक ही सीमित थी और उनका शिक्षण भी उतना ही था। एक बडी भ्रमणा यह भी फैलायी कि उस काल में शिक्षा का क्षेत्र केवल ब्राह्मणों तक ही सीमटा हुआ था। दुर्भाग्य यह भी रहा कि अनेक आधुनिक भारतीय इतिहासकार भी अंग्रेजी ज्ञान का भार उठाकर दंभ भरने वाले तथाकथित 'सेक्युलर' विचारकों ने भारत के प्राचीन ज्ञान का तलस्पर्शी अभ्यास किये बिना अंग्रेजो की जीहूजरी करते हुए उनके मत के साथ हां में हां मिलायी। यदि इन अनभिज्ञ लोगों की बातों में तिलमात्र भी सच्चाई होती तो उस काल में विश्व की समूची अर्थव्यवस्था में एक तिहाई हिस्सा केवल अकेले भारत का कैसे हो सकता था?

इतिहास के पन्ने दर पन्ने खोलकर देखने से जो भव्य चित्र दिखायी देता हैं, उसे देखकर स्पष्ट होता है कि **भारत केवल व्यापार ही नहीं बल्कि ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी था।** शिक्षा के क्षेत्र में भारत काफी ऊंचाई पर था। अंग्रेजो से काफी पहले, मुस्लिम आक्रांताओं के आक्रमण से भी काफी पहले हमारे देश में काफी सुनियोजित शिक्षाप्रणाली सक्रिय थी। तत्कालीन भारत शिक्षण व्यवस्था के सामने विश्व की किसी शिक्षा पद्धति से तुलना की जाये, तो भारत की तुलना में विश्व का ज्ञान काफी हद तक कमजोर था।

विश्व की सबसे पहली विश्वविद्यालयीन स्तर की शिक्षा व्यवस्था भारत में प्रारंभ हुई। विश्व का सबसे पहला सुनियोजित विद्यापीठ भारत में स्थापित हुआ। यह बात आज कितने भारतीयों की जानकारी में है कि उस **प्राचीन काल में भारत में अशिक्षित रहना अभिशाप माना जाता था?** भारत में इतनी मजबूत शिक्षा व्यवस्था थी। आज भारतीय संताने उच्चशिक्षा के लिए विदेशों में ज्ञान ढूंढने जाती है, मगर प्राचीन काल में विविध देशों के विद्यार्थी ज्ञानप्राप्ति के लिए भारत आते थे। अनेक संशोधक भारत में आकर शोध करते थे। उस काल में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं था, जिसका अध्ययन करने के लिए विश्व के लोगों को कहीं और भटकना पडे।

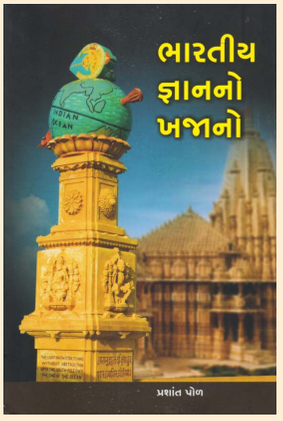

प्रसिद्ध सूफी संगीतकार, गायक, कवि और कव्वाली विधा का जन्मदाता **अमीर खुसरो** (ई.स. १२५२ से १३२५) जब भारतीय विद्यापीठों में पढने आया था, तब भारत की जमीन पर मुस्लिम आक्रांताओं ने पैर जमा लिये थे। इस कारण स्वाभाविक है कि उस काल में भारतीय शिक्षा संस्थानों एवं शिक्षण व्यवस्था के पतन का काल शुरु हो चुका था। मगर वही अमीर खुसरोने उस पतन काल को भारतीय विद्यापीठों कें बारे में काफी प्रशंसा करते हुए लिखा कि भारतीय विद्यापीठ काफी अद्वितीय कक्षा के हैं।

छोटे बच्चों को पसंद अरबी चमत्कारिक वार्ताओं का नायक **हासन अल रसीद** जिसका जीवन काल ई.सन ७५४ से ८४९ के दरम्यान था, उसने अपने अरबी सुलतान **अल मंसूर** से कहकर भारतीय विद्यापीठ के होशियार विद्यार्थीओं को अपने मुल्क में बुलवाने के लिए खास दूत भेजा था, यह उल्लेख कई ऐतिहासिक दस्तावेजो में मिलते हैं। भारत में यह सबसे पहला 'केम्पस इंटरव्यू' कहा जा सकता है।

मुस्लिम आक्रमणों के काफी पहले भारत में परिपूर्ण शिक्षा प्रणाली संचालित थी। इस अनुसंधान के अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। प्राचीन शिक्षा प्रणाली का सर्वप्रथम प्राथमिक स्तर घर से शुरु होता था। आठ-दस वर्ष के बालक को घर के सदस्य जरुरी प्राथमिक ज्ञान करवाते थे। हिंदु संस्कार में उपनयन के बाद गुरुकुल अथवा गुरु के घर बच्चों को भेजा जाता था। गुरु का अर्थ यहां संस्कृत और धर्म सिखाने वाले ऋषियों तक मर्यादित नहीं था। अलग-अलग क्षेत्र के निष्णात और दिग्गज लोग अध्यापन करवाते थे। समुद्र किनारे बसने वाले परिवारों के बच्चों को जहाज निर्माण की कला सिखाने वाले, धनुर्विद्या, मल्लविद्या, लुहारी, वास्तुविद्या जैसे अनेक रोजगार से जुडा अभ्यास क्रम भी चलता था। प्रायोगिक ज्ञान जीवन के हर क्षेत्र में दिखाई देता था। उसके बाद उच्चशिक्षा के लिए विद्यार्थीयों को विद्यापीठ में प्रवेश मिलता था। विद्यापीठ में उच्चस्तर की ज्ञानशाखाओं के माध्यम से भिन्न-भिन्न शास्त्र और कला से संबंधित ज्ञान का अभ्यास होता था। शिक्षक अथवा गुरुओं की लंबी परंपरा ने अनेक आचार्य, उपाध्यायों के हाथ के नीचे दर्जेदार शिक्षक तैयार हुए। उन्हें योग्यतानुसार चरक, गुरु, योजनासातिका और शिक्षक आदि पदवियां प्राप्त होती थी।

विद्यापीठों में दीक्षांत समारोह तथा सत्रसमाप्ति समारोह का आयोजन होता था। सत्र आरंभ का उत्सव '**उपकर्णमन**' और सत्र के अंत मनाये जाने वाले उत्सव को '**उत्सर्ग**' कहा जाता

था। पदवीदान समारोह प्रसंग को '**समवर्तना**' कहा जाता था। अवकाश दिवस के लिए '**अनध्याय**' शब्द का उपयोग होता था। समग्र वर्ष के दरम्यान होने वाले अनध्याय दिवस प्रतिमास की दो अष्टमी, दो चतुर्दशी, अमावस्या, पूनम तथा चातुर्मास का अंतिम दिवस आदि नियत होते थे। इसके उपरांत विशेष प्रासंगिक अनध्याय दिवस भी होते थे, आजकल की तरह रविवार जैसी साप्ताहिक छुट्टियों का प्रचलन नहीं होता था। भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार विदेशो में जहां जहां हुआ उदाहरणार्थ लाओस, कंबोडिया, जावा-युमागा (इंडोनेशिया) स्याम(थाईलैंड) आदि में वहां अभी हाल के कुछ वर्षो तक हमारे प्राचीन अनध्याय दिवस हमारी शिक्षा संस्थाओं द्वारा स्वीकृत दिवसों की भांति ही संचालित थे।

प्राचीन भारत के मुख्य विश्वविद्यालय (विद्यापीठ)

तक्षशिला विश्वविद्यालय-

तक्षशिला को विश्व का सर्वप्रथम विश्वविद्यालय होने का गौरव प्राप्त है। यह स्थान वर्तमान में पाकिस्तान में रावलपिंडी से १८ मील उत्तर में स्थित है। इसकी स्थापना ई.स पूर्व ७०० वर्ष में हो चुकी थी। ई.स. ४५५ पूर्व में सबसे पहले युरोपीयन हुण लोगों ने इसे भारी क्षति पहुंचाई। लगभग १२००वर्षों तक यहां आंतरराष्ट्रीय स्तर पर ज्ञानदान का काम सातत्यपूर्ण चलता रहा। यहीं से श्रेष्ठतम आचार्यो की परंपरा शुरु हुई। और अनेक ख्यातनाम विद्यार्थीयों ने यहां से बाहर आकर अपनी कीर्ति फैलाई।

तक्षशिला विद्यापीठ के बंद हो जाने के बाद कुछ ही वर्षो में मगध राज्य (वर्तमान में बिहार) में नालंदा विद्यापीठ की स्थापना हुई। ये दोनों विद्यापीठ एक ही समय में कभी कार्यरत नहीं थी।

कहा जाता है कि **तक्षशिला नगरी** की स्थापना **भरत** के पुत्र **तक्ष** के नाम पर की गई थी। कालांतर में तक्षशिला विद्यापीठ के नाम से यह स्थान और अधिक प्रसिद्ध हुआ। जातक कथाओं में इस विद्यापीठ के बारे में काफी जानकारियां मिलती है। इन कथाओं में १०५ स्थानों पर इस विद्यापीठ का उल्लेख हुआ है। उस काल में लगभग एक हजार वर्षों तक तक्षशिला की संपूर्ण भारत की बौद्धिक राजधानी के रूप में ख्याति थी। इस ख्याति को सुनकर ही **चाणक्य** काफी दूर से तक्षशिला (बौद्धग्रंथ **सुंसीमजातक** और **तेलपत्त** में तक्षशिला और काशी के मध्य का अंतर २००० गाऊ दर्शाया गया है)

ई.स. ५०० वर्ष पूर्व जब दुनिया चिकित्साशास्त्र नाम से भी अनजान थी, तब तक्षशिला विद्यापीठ में चिकित्साशास्त्र के सबसे बडे अभ्यास केंद्र की स्थापना हो चुकी थी। यहां इस विषय के लगभग ६० से अधिक विषयों के भिन्न-भिन्न प्रकार के अभ्यास लिए जाते थे। लगभग एक साथ १०५००विद्यार्थी शोध और प्रशिक्षण उपक्रम से जुडे होते थे।

तक्षशिला विद्यापीठ की उज्ज्वल परंपरा के गौरव-चिह्न

तक्षशिला विद्यापीठ की स्थापना (ई.पूर्व ७०० वर्ष) के बाद शिक्षाप्राप्त अनेक विद्यार्थीयो में से एक प्रसिद्ध विद्यार्थी का नाम था '**पाणिनि**', जिसने संस्कृत भाषा का व्याकरण तैयार किया।

ई. पूर्व छठी शताब्दि में चिकित्साशास्त्र निपुणता प्राप्त '**जीवक**' अथवा '**जीबाका**' नामक विद्यार्थी आगे चलकर मगध राज्य का प्रसिद्ध राजवैद्य बना, जिसने चिकित्सा विषयक अनेक ग्रंथो की रचना भी की।

ई. पूर्व चौथी शताब्दि में प्रसिद्ध हुए अर्थशास्त्र का विद्यार्थी **चाणक्य** अर्थात् **कौटिल्य** इसी विश्वविद्यालय का मेधावी छात्र था।

ई.स.४०५ में जब चीनी यात्री और विद्यार्थी **फाह्यान** तक्षशिला में दाखिल हुआ, उस समय तक्षशिला पतन के दौर में गुजर रहा था। पश्चिम से उठे आक्रमणों के दिन-प्रतिदिन हुए प्रहारों को इस विद्याकेंद्र ने सहन किया। अनेक आचार्य अपना काम छोडकर चले गये। उस चीनी विद्यार्थी को व्यापक ज्ञान से मोहताज रहना पडा। आगे चलकर सातवी शताब्दि में तक्षशिला के आकर्षण से दूसरा चीनी **युवानच्वांग** आया, तो दु:खी होकर लिखता है कि भरी-पूरी ज्ञान की परंपरा नष्ट हो चूकी है। मुस्लिम आक्रमणों ने रही-सही कसर भी पूरी कर दी। सन १२०० से १३०० के बीच तक्षशिला विश्वविद्यालय ने अंतिम सांस ले ली।

नालंदा विद्यापीठ

जिस कालखंड में हुण आक्रमणकारियों तक्षशिला विद्यापीठ उद्ध्वस्त किया, उसी समय के कुछ बाद के समयकाल में मगध साम्राज्य में नालंदा विश्वविद्यालय की नींव रखी गई थी। तत्कालीन (ई. स. ४१५ से ४५५) गुप्त वंशीय सम्राट **शकादित्य (कुमारगुप्त)** ने अपने अल्पकालीन शासनकाल में नालंदा विद्यापीठ का सर्वांगीण विकास किया। एक छोटे से बीज रूप वह उपक्रम कालांतर में बडा वटवृक्ष बनकर उभरा। शुरुआती दौर में इस विद्यापीठ का नाम नलविहार था। लगभग सात सौ वर्षों तक नालंदा विश्व के सर्वोत्कृष्ट ज्ञान-प्रतिष्ठान के रूप में सक्रिय रहा।

११९७ में एक बडा तुफान आया। **बख्तियार खिलजी** नामक मुस्लिम शासक ने इस विद्यापीठ को आग लगाकर राख कर दिया।

नालंदा के पाठ्यक्रम और शिक्षा का स्तर इतना ऊंचा था कि, यहां प्रवेश प्राप्त करने के लिए कडी परीक्षाओं से गुजरना पडता था। यहां बहुत सारे मूल्यवान और दुर्लभ ग्रंथो का विपुल भंडार था। चीनी यात्री **ह्युएनत्सांग** ने यहां लगातार दस वर्षो तक विद्याभ्यास किया, उसके गुरु शीलभद्र आसाम के निवासी थे। इस चीनी यात्री ने नालंदा विद्यापीठ की भरपूर प्रशंसा करते हुए लिखा कि यहां की शिक्षण व्यवस्था काफी उच्चस्तरीय है।

नालंदा विद्यापीठ ईमारतों का भव्य संकुल था। काफी लंबेचौडे क्षेत्र में इनकी व्याप्ति थी। भवनों के नाम भी कुछ खास आशय से रखे जाते थे। उदाहरणार्थ **रत्नसागर, रत्नोदधि** एवं **रत्नरंजक** आदि। मुख्य प्रशासकीय भवन मानमंदिर के नाम से पहचाना जाता था।

विक्रमशिला विद्यापीठ

आठवीं शताब्दीं में बंगाल के पास वंशीय राजा **धर्मपाल** ने इस विद्यापीठ की स्थापना वर्तमान बिहार में की थी। इस विश्वविद्यालय के अंतर्गत कुल छह महाविद्यालय व १०८ मुख्य शिक्षक थे। दसवीं शताब्दि के प्रसिद्ध तिबत्ति लेखक तारानाथ ने इस विद्यापीठ का विस्तृत वर्णन किया है। इसके प्रत्येक मुख्यद्वार पर एक प्रमुख आचार्य की नियुक्ति होती थी। नये प्रवेश लेनेवाले विद्यार्थीयों की ये आचार्य प्राथमिक परीक्षा लेते थे। उनकी परीक्षा में उत्तीर्ण विद्यार्थी ही विद्यापीठ में प्रवेश की पात्रता रखते थे। प्रत्येक दरवाजे पर नियुक्त आचार्यों के नाम इस प्रकार होते थे- पूर्वद्वार के पं. **रत्नाकर शास्त्री**, पश्चिम के **वर्गेश्वरकीर्ति**, उत्तरी द्वार के **नारोपंत** और दक्षिणी द्वार के **प्रज्ञाकर मित्रा** थे। इनमें से नारोपंत महाराष्ट्र से आये हुए थे। **आचार्यदीपक** विक्रमशिला में सबसे प्रसिद्ध और विशेष योग्यता प्राप्त आचार्य हुए।

बारहवीं शताब्दीं में यहां लगभग ३ हजार विद्यार्थी अध्ययन करते थे और यही समय इस विद्यापीठ के अस्त होने का काल चल रहा था। इसी दरम्यान पूर्वोत्तर भारत और दक्षिण में मुस्लिम आक्रमणकारियों का दबदबा जम चुका था, उन्होंने जहां-जहां भी भारत के ज्ञान के साधन देखे, उन्हें नष्ट किया। जिस स्थान पर यह विद्यापीठ था, वहां की खुदाई से ऐसे अनेक अवशेष प्राप्त हुए है, जो सिद्ध करते है कि यहां विशाल शैक्षणिक परिसर रहा है। पुरातत्त्वीय अवशेषों से पता चला है कि यहां कभी इतना विशाल सभामंडप रहा होगा, जिसमें आठ हजार लोग आसानी से बैठ पाते होंगे।

नालंदा में अध्ययन करने वालों में तिब्बत के विद्यार्थियों की संख्या काफी अधिक थी। संभवत: बौद्धधर्म के वज्रयान संप्रदाय के अभ्यास का यह महत्त्वपूर्ण केंद्र था।

सन १२३० में नालंदा को उद्ध्वस्त करने के बाद बख्तियार खिलजी ने इस विद्यापीठ के विशाल ग्रंथालय को आग लगाकर भस्म कर दिया।

उड्डयंतपूर विद्यापीठ

पालवंश के स्थापक राजा गोपाल ने इस विद्यापीठ की स्थापना मुख्यत: बौद्ध विहार के रूप में की थी। विशाल-भव्यतम भवन देखकर बख्तियार खिलजी को लगा कि यह कोई विशाल किला है और उसने भारी सेना के साथ यहां आक्रमण कर दिया। तत्कालीन राजा की सेना को इस अचानक आक्रमण का पता ही न चला और देखते ही देखते वह विद्या का विशाल केंद्र तहस-नहस हो गया। उस समय उपस्थित विद्यार्थियों और आचार्यो का प्रतीकार काम नहीं आया और बडी संख्या में वे मृत्यु के मुंह में चले गये।

सुलोटगी विद्यापीठ

कर्नाटक में विजापुर जिले में स्थित यहां एक महत्त्वपूर्ण विद्यापीठ था। ११वीं शताब्दि के अंत में इसकी स्थापना हुई थी। उस समय यहां राष्ट्रकूट का शासन चल रहा था। कृष्ण (तृतीय) नामक राजा के मंत्री नारायण ने इसका निर्माण करवाया था। यह विद्यापीठ बनकर तैयार हो चुका था और शैक्षणिक उपक्रम शुरु ही हुआ था, कि मुस्लिम हमलावरों ने इस पर अपना कब्जा जमा लिया था। संपूर्ण विद्यापीठ नष्ट हो गया। इस विद्यापीठ के अंतर्गत संचालित पविट्टागे नामक संस्कृत महाविद्यालय अल्पकाल में ही काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था। इस विद्यालय में पूरे देश से आये विद्यार्थियों में से केवल २०० विद्यार्थीयों को चयन करने के बाद प्रवेश मिला। विद्यार्थियों के आवास-भोजन आदि की यहां समुचित व्यवस्था थी।

सोमपुर महाविहार

वर्तमान में बांगलादेश स्थित नवगाम जिले के बादलगाझी तहसील में पहाडपुर ग्राम में महाविहार के लिए स्थापित हुआ यह शिक्षण केंद्र आगे चलकर एक महत्त्वपूर्ण विद्यापीठ के रूप में विकसित हुआ। पालवंशीय राजा धर्मपाल देव द्वारा ६वीं शताब्दि के अंत में इस विहारस्थान का निर्माण हुआ था। संभवत: इसे विश्व का सबसे बडा बौद्ध विहार कहा जा सकता है, कारण इसका निर्माण इतना व्यापक था, जहां चीन, तिब्बत, मलेशिया, जावा, सुमात्रा आदि दूर-सूदूर तक के विद्यार्थी विद्याभ्यास करने आते थे। दसवीं शताब्दि में प्रसिद्ध हुए विद्वान **अतिश दीपशंकर श्रीज्ञान** इस विद्यापीठ के प्रमुखाचार्य थे।

रत्नगिरि विद्यापीठ, उडीसा

छठी शताब्दि में बौद्धविहार के रूप में स्थापित यह स्थान आगे चलकर विद्या का बडा केंद्र बनकर उभरा। विशेषत: तिब्बत के विद्यार्थी बडी संख्या में यहां आकर विद्याभ्यास करते थे। तिब्बतीय इतिहास में इस विद्यापीठ का उल्लेख **"कालचक्र तंत्र विकास करने वाला विद्यापीठ"** के रूप में हुआ है, कारण यहां मुख्यत: खगोलशास्त्र का अध्ययन होता था।

इसके उपरांत अखंड भारत के कोने-कोने में ऐसे असंख्य शिक्षणकेंद्र कार्यरत थे। छोटे-छोटे विद्याकेंद्रों की गणना भी न की जा सके, इतना व्यापक ज्ञान का विस्तार था।

मध्यप्रदेश के जबलपुर में चौसठ योगिनी का मंदिर है, उसे कभी **गोलकी मठ** के रूप में ख्याति प्राप्त थी। विद्या के इस केंद्र की जानकारी **'मलकापुर पिलर'** के नाम से प्रसिद्ध खुदाई अभियान से प्राप्त हुई है।

मटमायुरवंश जो कि कलचुरी वंश की ही एक शाखा है। इस वंश के राजा **युवराजदेव (प्रथम)** नें इस मठ की स्थापना करवायी थी। मूल रूप से यहां पहले तांत्रिक आदि विषयों का अभ्यास करवाया जाता था। गोलकी मठ के अंतर्गत दूसरे अनेक विद्यालय आंध्रप्रदेश में संचालित होते थे।

बंगाल में **जगदल**, आंध्र में **नागार्जुनकोंडा**, काश्मीर में **शारदापीठ**, तमिलनाडु में **कांचीपुरम**, उडीसा का **पुष्पगिरि**, उत्तरप्रदेश का **वाराणसी** आदि जैसे अनेक विद्या केंद्र और विद्यापीठ कार्यशील थे। अनेक पिछडे क्षेत्रों में भी काफी छोटे-बडे शिक्षाकेंद्र थे, जो जनसामान्य के लिए काम करते थे। उस समय इन क्षेत्रों में भी संस्कृत केवल राजभाषा के रूप में ही नहीं, अपितु सामान्यजनों की बोलीभाषा के रूप में मान्य थी।

ईस्वी सन पूर्व दो सौ वर्ष से लगाकर ११वीं शताब्दि तक पेशावर, कंबोडीया, लाओस, जावा-सुमात्रा आदि संपूर्ण भूभाग पर संस्कृत राजभाषा और बोलीभाषा के रूप में प्रचलित थी।

प्राचीन भारतीय विद्यापीठों की कीर्ति संपूर्ण विश्व में प्रसर चुकी थी। भारत शिक्षा के क्षेत्र में जितना समृद्ध था, उसी के परिणाम स्वरूप व्यापार में भी उसने काफी ऊंची-ऊंची छलांग लगाई थी।

आज इन सब बातों को परिकथा माननेवाली पीढी के एक हजार वर्ष के मुस्लिम और बाद में कुछ काल की ब्रिटिश शासन की गैरनजरों के कारण- विश्व को ज्ञान देने वाली हमारी प्राचीन ज्ञानधारा की जानकारी नहीं है, और जरुरी शिक्षा से वंचित भी रह गयी। दूसरी विडंबना यह भी है कि हमे आज अपनी नीतिसंपन्न शिक्षा की समृद्ध विरासत भी याद दिलवाने के लिए पाश्चिमात्य चिंतको और संशोधकों की मदद लगती है! यह घोर शोकांतिका है।

(प्रकाश पोल की पुस्तक **'भारतीय ज्ञाननो खजानो'** से साभार)
(मूल गुजराती से हिंदी रूपांतर- **ओम ओसवाल**)

समाचार

दि. ४-१२-२०२२ के दिन **सन्मति तीर्थ विद्यापीठ, अरिहंत जागृति मंच, जैन विचार मंच** और **श्रुति मंडल** के ५५ विद्वान श्रुतभवन अवलोकनार्थ पधारे।

दि. १६-११-२०२२ के दिन बडा उपाश्रय बीकानेर, सत्यसाधना केंद्र, नाल (बीकानेर), सत्यसाधना केंद्र कोलकाता के ट्रस्टी तथा पू.आ. श्री जिनचंद्रसूरिजी म. के भक्त श्रीमान **सुरेंद्रजी डागा** श्रुतभवन पधारे।

दि. २१/२२-०१-२०२३ के दिन अहमदाबाद में श्रुतरत्नाकर और जैना (अमेरिका) द्वारा 'क्षमा' विषय आधारित वर्ल्ड कोन्फरन्स का आयोजन किया था। उसमें ३२ पेपर्स की प्रस्तुति हुई। पहले दिन पू. आचार्य भगवंत श्री **नंदिघोषसूरीश्वरजी** म.सा. की निश्रा में श्रुतभवन द्वारा प्रकाशित नौ शास्त्रों का संघार्पण हुआ। इस समय गुजरात युनिवर्सिटी के उप कुलपति प्रो. **डो. हिमांशु पंड्या**, जैना के पूर्व अध्यक्ष **श्री दिलीप शाह,** जैना के चेअरमन श्री **हरेश शाह**, मुंबई युनिवर्सिटी के डो. **बिपीन दोशी**, श्री **विजयकुमार जैन**, श्री **अनेकांतकुमार जैन**, श्री **धरमचंद जैन**, श्री **अभय दोशी , सेजल शाह**, श्री **यतिन पंड्या** और श्री **भूपेश शाह** आदि मान्यवर उपस्थित थे।

कार्यविवरण

शास्त्र संशोधन प्रकल्प अंतर्गत **उपा.श्रीविनयविजयजी कृतिसंग्रह, पं.श्री नेमकुशलजी कृतिसंग्रह, छंदोरत्नावली, मालापिंगल, छंदस्तत्त्व** और **सिद्धसेनदिवाकर कथा** का संपादन कार्य वर्तमान है। पू.सा.श्री **मधुरहंसाश्रीजी** म. **केशवदास बावनी, बोध बावनी** और **शब्दपरमार्थ वचनिका** इन ग्रंथों का लिप्यंतर कर रहे हैं। पू.सा.श्री **धन्यहंसाश्रीजी** म. **आस्तिक-नास्तिक संवाद** ग्रंथ का लिप्यंतर कर रहे हैं। अभ्यास वर्ग प्रकल्प में विभिन्न ग्रंथों का लिप्यंतर कार्य वर्तमान है।

वर्धमान जिनरत्नकोश प्रकल्प अंतर्गत पू. आ. श्री **मुनिचंद्रसू.** म., पू. आ. श्री **हेमहंससू.** म., पू. आ. श्री **तीर्थभद्रसू.** म., पू. पं. श्री **त्रिलोकवल्लभवि.** म., पू. मु. श्री **उदयरत्नवि.** म., पू. मु. श्री **शीलचंद्रवि.** ग., पू. मु. श्री **सुयशचंद्रवि.** म., पू. मु. श्री **श्रुतसुंदरवि.** म., पू. मु. श्री **विनयरक्षितवि.** म., पू. मु. श्री **रम्यबोधिवि.** म., पू. मु. श्री **कैवल्ययोगवि.** म., पू. मु. श्री **सौम्यचंद्रवि.** म., पू. मु. श्री **मुक्तिश्रमणवि.** म., पू. मु. श्री **ह्रींकाररत्नवि.** म., पू. सा. श्री **आगमकिरणाश्रीजी** म., पू. सा. श्री **हितगुणाश्रीजी** म., श्री **कीरिट शाह(मुंबई), प्रशांत भूपेंद्र जानी**(नंदुरबार), **लवलेश महाजन, रोहित चाकोटे, केवल मेहता** (अध्यात्म परिवार, सुरत), तथा **डो. मनोज श्रीमाल**(केंद्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, हिमाचल प्रदेश) को हस्तप्रत संबंधि माहिती प्रदान करने का लाभ मिला।

प्राचीन श्रुतसंपदा के समुद्धार के लिए समुदार सहयोग देनेवाले महानुभाव

श्री अभयजी श्रीश्रीमाल (अभूषा फाउंडेशन), चेन्नई
श्री सिकंदराबाद गुजराती जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ, सिकंदराबाद
श्री सुखवर्धक कुंथुनाथ डिवाईन जैन संघ, पुणे
श्री चंद्रप्रभु जैन श्वेतांबर मंदिर, चेन्नई
न्यू पूना कोटन फेक्टरी प्रा. लि., पुणे
श्री वासुभारती झवेरी ट्रस्ट, मुंबई
श्री सुधीरभाई एस कापडिया, मुंबई
श्री कुंथुनाथ जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ, अहमदाबाद
श्री कीर्तिकुमार धरमचंद ओसवाल, पुणे
श्री मुनिसुव्रतस्वामी जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ, मुंबई
श्री जैन देरासर एवं उपाश्रय ट्रस्ट, कुवाला
श्री तीर्थ सामायिक महिला मंडल, चेन्नई
नानाभाडिया जैन संघ, मुंबई
म्हैसूर महिला सामायिक मंडल
सौ. कविताबेन रितेशभाई कोठारी
ओम शांति ट्रस्ट, पालिताणा
श्री झवेरचंद एम. झवेरी, मुंबई
श्री तिलकेश्वर पार्श्वनाथ मंदिर महिला मंडल, इंदौर
किंजल शाह, बेंगलोर
श्री नथमलजी गुलबाजी गुंदेशा
श्री नीरवभाई प्रतापभाई शाह, मुंबई
श्री गुण उपासक परिवार ट्रस्ट, नासिक

प्रतिभाव

आज मेरी जिंदगी का यादगार दिन है। संयोग से मैं पूना के टीप-टोप होटल में रुका था। लेकिन मुंबई से भाईश्री का फोन आया कि, हमें पूना में एक जगह पर जाना है। मैं, भाईश्री और जितो के किशोरभाई श्रुतभवन में आये। वास्तव में ऐसा कहीं देखा नहीं था कि, जैन धर्म के इतने पुराने ग्रंथों को अच्छे तरीके से संरक्षित कर रहे है। पूरे हिंदुस्थान में ही नहीं तो पूरी दुनिया में देखने नहीं मिलेगा ऐसे जैन धर्म के ग्रंथों का संकलन यहां हो रहा है। यहां जो साध्वीजी भगवंत है इन्होंने कितनी लिपि में नवकार लिखे है। आज ऐसा लग रहा है कि हम मोक्ष में विचरण कर रहे है।

वसंतभाई गालिया
ऋणानुबंध ट्रस्ट, पार्ला (ई), मुंबई

सुवाक्य

तरवोऽपि हि जीवन्ति जीवन्ति मृगपक्षिणः।
स जीवति मनो यस्य मननेनैव जीवति॥
वैसे तो वृक्ष भी जीते है,
पशु भी जीते है,
पक्षी भी जीते है।
परंतु सही अर्थ में वही जीता है
जो कोई विचार के साथ जीता है।

Printed Matter
Posted under clause 121 & 114 (7) of P & T Guide

To,

From : Shrutbhavan Research Centre
(Initiation of Shrutdeep Research Foundation)
47/48, Achal Farm, Nr. Sachchai Mata Mandir, Ahead of Jain Agam Temple, Katraj, Pune-411046
Mo. 07744005728 Email : shrutbhavan@gmail.com Website : www.shrutbhavan.org

For Informative and Inspirational speeches about Shrut please subscribe our Shrutbhavan YouTube channel
Shrutbhavan Pune